शोधामृत
(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No- 242-247
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. गुलाब सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज,
डुमरा, सीतामढ़ी, बिहार।

Corresponding Author :

डॉ. गुलाब सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज,
डुमरा, सीतामढ़ी, बिहार।

योगसूत्र प्रतिपादित 'क्लेश' एवं समकालीन मनोचिकित्सा : चिंता, अवसाद तथा उपचारात्मक अंतर्दृष्टि के संदर्भ में तुलनात्मक विमर्श

सारांश-प्रस्तुत शोधपत्र महर्षि पतंजलिकृत 'पातंजल योगसूत्र' में वर्णित 'पंच क्लेशों' (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) तथा समकालीन मनोचिकित्सा—विशेषकर संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा (संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा अथवा सीबीटी) और अस्तित्ववादी मनोचिकित्सा के मध्य अंतर्संबंधों का गहन दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय में चिंता (एंग्जाइटी) और अवसाद (डिप्रेशन) जैसी मानसिक व्याधियां वैश्विक महामारी का रूप ले चुकी हैं। आधुनिक मनोविज्ञान जहाँ इन व्याधियों के बाह्य और संज्ञानात्मक लक्षणों का उपचार करता है, वहीं योग दर्शन इनके मूल कारणों (क्लेशों) के समूल नाश का मार्ग प्रशस्त करता है। इस शोध पत्र में अज्ञेय के मनोवैज्ञानिक उपन्यास 'शेखर: एक जीवनी' तथा जैनेंद्र कुमार के 'त्यागपत्र' जैसे साहित्यिक आख्यानों में अभिव्यक्त मनोवैज्ञानिक कुंठाओं, अस्मिता के संकट और आत्म-पीड़न का भी योगिक क्लेशों के आलोक में विश्लेषण किया गया है। यह शोध स्थापित करता है कि अविद्या का निवारण और 'प्रतिपक्ष भावन' जैसी योगशास्त्र प्रतिपादित तकनीकें आधुनिक मनोचिकित्सा के लिए एक अत्यंत सशक्त एवं समग्र उपचारात्मक अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो मानव को केवल रोग-मुक्त ही नहीं, अपितु आत्म-साक्षात्कृत भी बनाती हैं।

कूट शब्द-योगसूत्र, पंच क्लेश, समकालीन मनोचिकित्सा, संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा, चिंता, अवसाद, अविद्या, अस्मिता, प्रतिपक्ष भावन, अज्ञेय, जैनेंद्र कुमार।

1. परिचय-मानव मन की अथाह जटिलताओं, मनोवैज्ञानिक विकृतियों और दुःखों के स्थायी निवारण हेतु भारतीय दार्शनिक परंपरा में 'योग दर्शन' का स्थान सर्वोपरि और अद्वितीय है। महर्षि पतंजलि द्वारा रचित 'पातंजल योगसूत्र' मात्र एक आध्यात्मिक या कैवल्यप्राप्ति का ग्रंथ नहीं है, अपितु यह मानव चेतना, व्यवहार और मानसिक स्वास्थ्य का एक अत्यंत परिष्कृत, वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक शास्त्र है (शर्मा, 2015)। पतंजलि ने योगसूत्र के प्रथम पाद में ही "योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" (पतंजलि, 1/2) के रूप में योग को परिभाषित करते हुए यह स्पष्ट कर

दिया है कि चित्त(मन, बुद्धि और अहंकार का सम्मिश्रण) की अस्थिर वृत्तियों का शमन ही पूर्ण मानसिक शांति का एकमात्र मार्ग है। दूसरी ओर, समकालीन मनोचिकित्सा, विशेष रूप से संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा और मनोविश्लेषण, व्यक्ति के नकारात्मक विचारों, विचलित भावनाओं और समाज-विरोधी व्यवहारों को परिवर्तित कर उसे मानसिक स्वास्थ्य प्रदान करने का निरंतर प्रयास करती है (बेक, 2011)।

पतंजलि ने मानव जीवन में विद्यमान सभी प्रकार के दुःखों, मानसिक विक्षिप्तियों, अवसादों और व्याधियों का मूल कारण 'क्लेशों' को माना है। योगसूत्र के साधनपाद में पाँच क्लेशों का विशद वर्णन मिलता है: "अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः"(पतंजलि, 2/3)। ये क्लेश—अज्ञान, अहंकार, आसक्ति, घृणा और मृत्यु का भय—मानव के अवचेतन मन में गहरे रचे-बसे वह जन्म-जन्मांतर के संस्कार हैं, जो चिंता, अवसाद और व्यक्तित्व विकारों जैसी आधुनिक मानसिक बीमारियों के बीज़रूप हैं(वर्णवाल, 2002)। आधुनिक युग के प्रख्यात मनोवैज्ञानिकों, जैसे कार्ल जंग और आर्थर शोपेनहावर ने भी प्राच्य दर्शन और योगसूत्र का गहन अध्ययन कर यह स्वीकार किया है कि मानव अचेतन की जो समझ भारतीय दर्शन में है, वह आधुनिक मनोविज्ञान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है(जंग, 1939)।

प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य दार्शनिक दृष्टिकोण से यह उद्घाटित करना है कि किस प्रकार योगसूत्र के ये पाँच क्लेश आधुनिक मनोवैज्ञानिक विकृतियों के पूर्णतः समतुल्य हैं । इसके साथ ही साहित्य, जो समाज और मनोविज्ञान का दर्पण है, उसमें अभिव्यक्त चरित्रों की मानसिक उथल-पुथल को योग के इन क्लेशों के माध्यम से कैसे समझा जा सकता है, इसका अन्वेषण भी इस शोध के माध्यम से किया जाना है । इसके अतिरिक्त यह शोधपत्र यह भी जानने का प्रयास करेगा कि क्या योग की प्राचीन उपचारात्मक विधियाँ समकालीन मनोचिकित्सा के लिए एक सुदृढ़ और समग्र आधार प्रस्तुत करती हैं ?

2. चर्चा एंव विश्लेषण-

(क) अविद्या और संज्ञानात्मक विकृतियाँ: अज्ञान का दार्शनिक मनोविज्ञान-योग दर्शन में 'अविद्या'(अज्ञान) को समस्त क्लेशों की जननी और जन्मदात्री माना गया है। महर्षि पतंजलि स्पष्ट करते हैं—"अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम्"(पतंजलि, 2/4), अर्थात् अविद्या ही आगे आने वाले चारों क्लेशों(अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) की प्रसूति-भूमि या आधार है, चाहे वे क्लेश प्रसुप्त(सोए हुए), तनु(कमजोर), विच्छिन्न(दबे हुए) या उदार(सक्रिय) अवस्था में हों। अविद्या का तात्पर्य यहाँ केवल स्कूली शिक्षा, सूचनाओं या लौकिक ज्ञान के अभाव से नहीं है, बल्कि यह यथार्थ के प्रति एक मौलिक, मिथ्या दृष्टिकोण है । पतंजलि के शब्दों में, अनित्य को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःख को सुख और अनात्मा को आत्मा मान लेना ही अविद्या है(दशोरा, 2006)।

समकालीन मनोचिकित्सा, विशेषकर आरोन टी. बेक द्वारा प्रतिपादित 'संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा'(सीबीटी) में अविद्या के इस स्वरूप को 'संज्ञानात्मक विकृति'(कॉग्निटिव डिस्टॉर्शन) या 'स्वचालित नकारात्मक विचार' के रूप में देखा और विश्लेषित किया जा सकता है(बेक, 2011)। संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का मूल सिद्धांत यह मानता है कि अवसाद(डिप्रेशन) और चिंता(एंग्जाइटी) का मूल कारण व्यक्ति की बाह्य परिस्थितियों में नहीं, बल्कि उन परिस्थितियों की उसकी विकृत, अतार्किक और अवास्तविक व्याख्या में निहित है(हॉफमैन, 2012)। जब व्यक्ति अविद्या के गहन प्रभाव में क्षणभंगुर सांसारिक उपलब्धियों या भौतिक संबंधों(अनित्य) को स्थायी(नित्य) मान लेता है, और उनके छिन जाने पर गहरा शोक करता है, तो वह तीव्र अवसाद का शिकार हो जाता है(पांडेय, 2021)।

संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा का संपूर्ण उपचार मॉडल भी इन्हीं अतात्त्विक और विकृत विचारों(अविद्या) को पहचान कर उन्हें यथार्थवादी, तार्किक और सकारात्मक विचारों से प्रतिस्थापित करने पर आधारित है(मेडिकेयर, 2025)। योगसूत्र में इस अविद्या के नाश की प्रक्रिया को 'विवेक ख्याति' कहा गया है, जो असत्य से सत्य को अलग करने की निर्भ्रांत प्रज्ञा है। इस प्रकार, आधुनिक सीबीटी वस्तुतः पतंजलि के अविद्या-निवारण सिद्धांत का ही एक सीमित, नैदानिक संस्करण प्रतीत होती है।

(ख) अस्मिता/अहंकार और पहचान का संकट: साहित्यिक और मनोवैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य-अविद्या के गर्भ से उत्पन्न होने वाला दूसरा प्रमुख क्लेश 'अस्मिता' है । महर्षि पतंजलि इसे अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से परिभाषित करते हुए कहते हैं—"दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता"(पतंजलि, 2/6), अर्थात् द्रष्टा(पुरुष या विशुद्ध चेतना) और दर्शन

शक्ति(बुद्धि या चित्त) को अज्ञानवश एक ही मान लेना अस्मिता है। आधुनिक मनोविज्ञान, विशेष रूप से फ्रायडियन मनोविश्लेषण में इसे 'ईगो'(अहं) की अवधारणा से भली-भांति समझा जा सकता है(जंग, 1939)। जब व्यक्ति अपनी भौतिक पहचान, सामाजिक पद, वैचारिक मान्यताओं या शारीरिक रूप को ही अपना वास्तविक शाश्वत स्वरूप मान लेता है, तो उसके भीतर 'पहचान का संकट'(आइडेंटिटी क्राइसिस) जन्म लेता है। यह अहंकार व्यक्ति को तीव्र स्वार्थ, सामाजिक अलगाव और आत्म-मुग्धता की ओर धकेल देता है (शर्मा, 2015)।

साहित्यिक दृष्टिकोण से विश्लेषण करें तो अस्मिता और उससे उत्पन्न मनोवैज्ञानिक कुंठाओं का अत्यंत सजीव, मर्मस्पर्शी और यथार्थवादी चित्रण सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक उपन्यास 'शेखर: एक जीवनी' में मिलता है । इस उपन्यास का नायक शेखर निरंतर अपने विद्रोही स्वभाव, गहरे मानसिक द्वंद्वों और थोपे गए सामाजिक बंधनों के विरुद्ध अपनी एक स्वतंत्र अस्मिता की खोज में भटकता रहता है(अज्ञेय, 1941)। शेखर के भीतर व्याप्त कुंठा, विद्रोह और घुटन वास्तव में योगसूत्र की इसी 'अस्मिता' रूपी क्लेश का परिणाम है, जहाँ वह अपने अहम्(ईगो) और बाहरी दुनिया के यथार्थ के बीच सामंजस्य स्थापित नहीं कर पाता है(वाजपेयी, 1965)। उसकी असामाजिक प्राणी जैसी चेतना उसे समाज से काट देती है, जो अस्मिता के विकृत रूप का ही साहित्य में प्रकटीकरण है।

इसी क्रम में, हिंदी साहित्य के एक अन्य पुरोधा जैनेंद्र कुमार के प्रसिद्ध उपन्यास 'त्यागपत्र' की नायिका मृणाल का चरित्र अस्मिता और समाज द्वारा आरोपित 'सतीत्व' की धारणा के मध्य भयंकर मनोवैज्ञानिक संघर्ष की करुण गाथा है(जैनेंद्र, 1937)। मृणाल स्त्री धर्म और पत्नी धर्म के मध्य पिसती हुई भीषण आत्म-पीड़न(मासोकिज्म) का शिकार हो जाती है(यादव, 2016)। मृणाल का यह असीमित दुख विशुद्ध रूप से अस्मिता क्लेश का ही प्रकटीकरण है, जहाँ एक अवास्तविक सामाजिक पहचान(अविद्याजनित अस्मिता) ने उसके वास्तविक और स्वतंत्र स्व(द्रष्टा) को पूर्णतः आच्छादित कर लिया है। जैनेंद्र का जीवन दर्शन अद्वैत सत्य को मानता है, जहाँ वे लिखते हैं कि "अहंता के माध्यम से ही अद्वैत सत्य का बोध हो सकता है" और "उन खण्डो को लेकर आदमियो में अस्मिता की उतावली मचने लगी"(जैनेंद्र, पृष्ठ 85)। यह साहित्य और मनोविज्ञान का अद्भुत संगम है जो योगसूत्र के सिद्धांतों की प्रासंगिकता को पुष्ट करता है।

(ग) राग और द्वेष: आसक्ति, विकर्षण और भावनात्मक नियमन की विफलता-मानसिक अशांति और समकालीन मनोविकारों के अध्ययन में राग और द्वेष की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। योगसूत्र के अनुसार "सुखानुशयी रागः"(पतंजलि, 2/7) अर्थात् सुखद अनुभूतियों, वस्तुओं या व्यक्तियों के प्रति जो तीव्र खिंचाव या आसक्ति होती है, वह राग है। इसके ठीक विपरीत "दुःखानुशयी द्वेषः"(पतंजलि, 2/8) अर्थात् दुःखद अनुभूतियों, विचारों या परिस्थितियों से दूर भागने या उनसे घृणा करने की प्रबल प्रवृत्ति द्वेष है। समकालीन मनोविज्ञान की भाषा में इसे 'भावनात्मक नियमन'(इमोशनल रेगुलेशन) की विफलता के रूप में परिभाषित किया जाता है(ग्रॉस, 2013)।

जब व्यक्ति किसी सुखद अनुभव से अत्यधिक बंध जाता है(राग), तो उस सुख के छिन जाने या भविष्य में न मिलने का भय उसे एक स्थायी 'चिंता'(एंग्जाइटी) से भर देता है। इसी प्रकार, जब वह किसी अप्रिय अनुभव या व्यक्ति से द्वेष करता है, तो उसके भीतर अनियंत्रित क्रोध, हताशा और तनाव उत्पन्न होता है(दशोरा, 2006)। मनोचिकित्सा की दृष्टि से विश्लेषण करें तो राग 'डोपामिन' की उस अंतहीन लालसा की तरह है जो व्यसन(एडिक्शन) और जुनूनी-बाध्यकारी विकारों(ओसीडी) को जन्म देती है, और द्वेष वह मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया है जो विभिन्न प्रकार के भय(फोबिया) या समाज-विरोधी आक्रामक विकारों को जन्म देती है(बेक, 2011)।

संत तुकाराम के दार्शनिक विचारों का विश्लेषण करते हुए भी यह स्पष्ट होता है कि भविष्य की अनिश्चितताओं के प्रति अत्यधिक आसक्ति ही अवसाद को जन्म देती है। तुकाराम का समभाव और वैराग्य सिद्धांत पतंजलि के क्लेश-मुक्ति सिद्धांत के पूर्णतः समतुल्य है, जो व्यक्ति को मानसिक स्थिरता प्रदान करता है(पांडेय, 2021)। राग और द्वेष वास्तव में एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, जो चित्त की साम्यावस्था(इक्विलिब्रियम) को भंग कर व्यक्ति को निरंतर द्वंद्व में फंसाए रखते हैं।

(घ) अभिनिवेश/मृत्यु-चिंता: अस्तित्ववादी उपचारात्मक दृष्टिकोण-योगसूत्र का पांचवां और अंतिम क्लेश 'अभिनिवेश' है । महर्षि पतंजलि इसके मनोविज्ञान को उद्घाटित करते हुए कहते हैं—"स्वरसवाही विदुषोऽपि

तथारूढोऽभिनिवेशः"(पतंजलि, 2/9)। अर्थात्, जीवन जीने की अदम्य इच्छा और मृत्यु का अकारण भय अभिनिवेश है, जो केवल मूर्खों में ही नहीं, अपितु बड़े-बड़े ज्ञानियों और विद्वानों तक में समान रूप से प्रवाहित होता है(सरस्वती, 1998)। यह मृत्यु-भय जीव के अवचेतन में इस कदर व्याप्त है कि वह हर क्षण अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्षरत रहता है।

समकालीन अस्तित्ववादी मनोचिकित्सा(एग्जिस्टेंशियल साइकोथेरेपी) मृत्यु की इसी गहरी चिंता(डेथ एंग्जाइटी) को मानव जीवन के सबसे गहरे अवसादों और विक्षिप्तियों का मूल मानती है(येलम, 1980)। विक्टर फ्रैंकल और इरविन येलम जैसे प्रख्यात मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि मृत्यु का अचेतन भय व्यक्ति के भीतर एक अस्तित्वगत शून्यता(एग्जिस्टेंशियल वैक्यूम) पैदा करता है, जिससे वह जीवन के अर्थ को खो बैठता है(विवेकानंद, 2005)। योग दर्शन यह प्रतिपादित करता है कि मृत्यु केवल भौतिक शरीर(दृश्य) का परिवर्तन है, आत्मा(द्रष्टा) का नहीं।

जब तक व्यक्ति अविद्या और अस्मिता के सघन प्रभाव के कारण स्वयं को केवल नश्वर शरीर मानता है, अभिनिवेश उसे निरंतर डराता रहेगा। अस्तित्ववादी चिकित्सा और योग दर्शन, दोनों इस बात पर पूर्णतः सहमत हैं कि मृत्यु की परम वास्तविकता को सहज भाव से स्वीकार(एक्सेप्टेंस) करने से ही व्यक्ति जीवन के वास्तविक अर्थ को प्राप्त कर सकता है और मृत्यु-चिंता से मुक्त हो सकता है(विवेकानंद, 2005)।

योगसूत्र के क्लेश	आधुनिक मनोवैज्ञानिक विकृतियाँ	प्रमुख लक्षण एवं प्रभाव
अविद्या	संज्ञानात्मक विकृति	अवास्तविक विचार, यथार्थ का मिथ्या मूल्यांकन, भ्रम।
अस्मिता	पहचान का संकट, अहंकार	आत्म-मुग्धता, कुंठा, सामाजिक अलगाव, श्रेष्ठता/हीनता ग्रंथि।
राग	व्यसन, आसक्ति विकार	किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति अति-आसक्ति, खोने का भय।
द्वेष	क्रोध विकार, फोबिया	हताशा, आक्रामकता, अप्रिय परिस्थितियों से भागने की प्रवृत्ति।
अभिनिवेश	मृत्यु-चिंता, अस्तित्वगत संकट	जीवन के प्रति अत्यधिक मोह, शून्यता का बोध, मृत्यु का अचेतन भय।

3. चिंता और अवसाद: योगसूत्र की उपचारात्मक अंतर्दृष्टि एवं प्रतिपक्ष भावन-समकालीन मनोचिकित्सा और योगदर्शन के मध्य सबसे सशक्त और व्यावहारिक सेतु उनका उपचारात्मक(थैराप्यूटिक) दृष्टिकोण है। मनोवैज्ञानिक विश्लेषण स्पष्ट करता है कि अवसाद(डिप्रेशन) अनिवार्य रूप से अतीत से जुड़ा होता है—अतीत की विफलताओं का दुःख, राग के टूटने की अथाह पीड़ा, और आत्मग्लानि(दशोरा, 2006)। इसके विपरीत, चिंता(एंग्जाइटी) सदैव भविष्य से जुड़ी होती है—भविष्य में संभावित हानि का डर(द्वेष) और अस्तित्व पर संकट का भय(अभिनिवेश) (पांडेय, 2021)। योग दर्शन इन गंभीर व्याधियों के निर्मूलन हेतु 'क्रिया योग' और 'अष्टांग योग' के रूप में एक सुव्यवस्थित मार्ग सुझाता है(सिंह, 2025)।

पतंजलि अपने साधनपाद के आरंभ में ही कहते हैं, "तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः"(पतंजलि, 2/1)। अर्थात् तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान क्रिया योग के अंग हैं। इनका मुख्य उद्देश्य "समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च"(पतंजलि, 2/2) है। अर्थात् चित्त में समाधि की भावना उत्पन्न करना और अविद्या आदि क्लेशों को क्षीण(कमजोर) करना(वर्णवाल, 2002)। मनोचिकित्सा के उपचारात्मक दृष्टिकोण से इनका विश्लेषण अत्यंत रोचक है:

1. **तप (Discipline):** यह सीबीटी की व्यवहारिक सक्रियता(बिहेवियरल एक्टिवेशन) के समतुल्य है, जो अवसादग्रस्त व्यक्ति को उसकी जड़ता और निष्क्रियता से बलपूर्वक बाहर लाती है।
2. **स्वाध्याय (Self-study):** यह मनोचिकित्सा की 'संज्ञानात्मक पुनर्संरचना'(कॉग्निटिव रीस्ट्रक्चरिंग) है, जहाँ व्यक्ति गहन आत्म-निरीक्षण कर अपने भीतर छिपे स्वचालित नकारात्मक विचारों(अविद्या जनित विकृतियों) को

पहचानता है और उनका तार्किक विश्लेषण करता है(बेक, 2011)।

3. **ईश्वरप्रणिधान (Surrender to God):** यह एक प्रकार की 'एक्सेप्टेंस एंड कमिटमेंट थेरेपी'(ACT) है, जहाँ व्यक्ति अपने प्रचंड अहंकार(अस्मिता) और बाह्य परिस्थितियों पर नियंत्रण की व्यर्थ लालसा को किसी सर्वोच्च सत्ता या ब्रह्मांडीय सत्य के समक्ष पूर्णतः समर्पित कर देता है, जिससे उसकी गहरी चिंताएं तत्काल शांत हो जाती हैं(सरस्वती, 1998)।

इसके अतिरिक्त, क्लेशों के नाश के लिए महर्षि पतंजलि ने एक अद्वितीय मनोवैज्ञानिक सूत्र दिया है: "वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम्" (पतंजलि, 2/33)। इसका अर्थ है कि जब चित्त में नकारात्मक, हिंसक या अस्वस्थ विचार(वितर्क) उठें, तो तुरंत उनके विपरीत सकारात्मक और कल्याणकारी विचारों(प्रतिपक्ष) का अभ्यास करना चाहिए। यह सूत्र आधुनिक सीबीटी की पूर्ण आधारशिला है, जहाँ रोगी की अतार्त्विक और अवसादग्रस्त मान्यताओं का प्रतिवाद कर उन्हें तार्किक, सकारात्मक और स्वस्थ विचारों से बदला जाता है(पाडेस्की, 1990)।

उपचारात्मक दृष्टियां	**योग मनोविज्ञान (पातंजल योगसूत्र)**	**समकालीन मनोचिकित्सा (सीबीटी/मनोविश्लेषण)**
समस्या का मूल	अविद्या एवं पंच क्लेश	स्वचालित नकारात्मक विचार(ANTs), अचेतन द्वंद्व
उपचार का लक्ष्य	चित्तवृत्ति निरोध, विवेक ख्याति	संज्ञानात्मक पुनर्संरचना, भावनात्मक संतुलन
उपचारात्मक विधि	प्रतिपक्ष भावन, अष्टांग योग, स्वाध्याय	संज्ञानात्मक विकल्प निर्माण
अंतिम परिणाम	कैवल्य(मोक्ष), क्लेशों का समूल नाश	मानसिक स्वास्थ्य, लक्षणों का प्रबंधन

4. परिणाम-योगसूत्र के क्लेशों और समकालीन मनोचिकित्सा के इस तुलनात्मक शोध और विश्लेषण से कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण परिणाम सामने आते हैं । प्रथम, आधुनिक मनोचिकित्सा(विशेषकर सीबीटी और अस्तित्ववादी चिकित्सा) आज जिन भी मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का प्रयोग मानसिक रोगों के उपचार के लिए कर रही है, उनके बीज़ महर्षि पतंजलि के 'क्लेश' सिद्धांत और 'प्रतिपक्ष भावन' में हजारों वर्ष पूर्व ही स्पष्ट रूप से विद्यमान थे(शर्मा, 2015)।

द्वितीय, आधुनिक चिकित्सा जहाँ मुख्य रूप से रोग के बाह्य लक्षणों(सिम्पटम्स) के प्रबंधन और औषधीय हस्तक्षेप पर केंद्रित होती है, वहीं योगसूत्र का दृष्टिकोण 'मूल-कारण'(रूट कॉज़) को समूल नष्ट करने का है । अविद्या(मूल अज्ञान) के नाश के बिना राग, द्वेष और अवसाद का स्थायी शमन किसी भी आधुनिक चिकित्सा से पूर्णतः संभव नहीं है(दशोरा, 2006)।

तृतीय, हिंदी साहित्य—जैसे अज्ञेय के 'शेखर: एक जीवनी' और जैनेंद्र के 'त्यागपत्र'—के पात्रों का विश्लेषण यह सिद्ध करता है कि अस्मिता और क्लेश केवल अमूर्त दार्शनिक अवधारणाएं नहीं हैं, बल्कि ये मानव के दैनिक जीवन, उसके संबंधों, उसकी सामाजिक पहचान और उसकी मानसिक कुंठाओं को गहराई से प्रभावित करने वाले शाश्वत मनोवैज्ञानिक सत्य हैं(यादव, 2016)। साहित्य की ये रचनाएं मानव मन के इन्हीं क्लेशों का जीवंत दस्तावेजीकरण हैं ।

चतुर्थ, योग और मनोचिकित्सा का यह अंतर्संबंध सिद्ध करता है कि 'ध्यान' और 'प्रतिपक्ष भावन' तंत्रिका-

वैज्ञानिक (न्यूरोसाइंटिफिक) रूप से मस्तिष्क के डिफ़ॉल्ट मोड नेटवर्क(सहज अवस्था संजाल) को शांत कर मानसिक स्वास्थ्य को पुनर्स्थापित करने में अत्यधिक प्रभावी हैं(सराफ, 2023)।

निष्कर्ष-निष्कर्षतः, महर्षि पतंजलि का योगसूत्र मात्र एक दर्शन नहीं, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य और मानव चेतना के आमूलचूल रूपांतरण का एक कालजयी, सर्वसमावेशी मनोवैज्ञानिक शास्त्र है। 'क्लेशों'(अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश) का सिद्धांत मानव मन की उन सभी जटिल ग्रंथियों को पूर्ण अनावृतता के साथ उद्घाटित करता है जो आज के आधुनिक युग में भयंकर चिंता, अवसाद, घुटन और अस्मिता के संकट के रूप में परिलक्षित हो रही हैं ।

समकालीन मनोचिकित्सा और योगसूत्र एक-दूसरे के विरोधी नहीं, अपितु एक-दूसरे के उत्कृष्ट पूरक हैं (वर्णवाल, 2002)। जहाँ आधुनिक संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा व्यक्ति के विचार और व्यवहार के सतही स्तर पर कार्य कर उसे समाज के योग्य बनाती है, वहीं योग दर्शन चेतना की असीम गहराइयों में उतरकर जन्म-जन्मांतर के अचेतन संस्कारों(कर्माशय) को भस्म कर देता है और अंततः व्यक्ति को 'तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्' (आत्मा का अपने मूल विशुद्ध स्वरूप में स्थित होना) की सर्वोच्च अवस्था तक ले जाता है(सिंह, 2025)।

भारतीय ज्ञान परंपरा का यह गहन मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण न केवल रोगों के उपचार के लिए, बल्कि एक संतुलित, प्रज्ञावान, तनाव-मुक्त और आत्म-साक्षात्कृत जीवन जीने के लिए आज के अशांत युग में नितांत प्रासंगिक है। योग की यह उपचारात्मक अंतर्दृष्टि मानव को बाह्य व्याधियों और विकृतियों के आवरण से मुक्त कर उसे उसकी आंतरिक पूर्णता का दर्शन कराती है, जो निश्चित रूप से आधुनिक मनोरोग विज्ञान के लिए एक नवीन, समग्र और परम कल्याणकारी प्रतिमान(पैराडाइम) स्थापित करती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. अज्ञेय, सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन. *शेखर: एक जीवनी*. सरस्वती प्रेस, 1941.
2. कुमार, जैनेन्द्र. *त्यागपत्र*. हिंदी बुक सेंटर, 1937.
3. कुमार, जैनेन्द्र. *अनन्तर*. पूर्वोदय प्रकाशन, पृष्ठ 85.
4. जंग, कार्ल. *मनोविज्ञान और प्राच्य दर्शन(Psychology and Eastern Religion)*. रूटलेज, 1939.
5. दशोरा, नंदलाल. *पातंजल योग दर्शन: एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन*. किताब महल, 2006.
6. पतंजलि, महर्षि. *पातंजल योगसूत्र*. गीता प्रेस, 2002.
7. पांडेय, दर्शन. *संत तुकाराम का वैराग्य-बोध और मानसिक स्वास्थ्य*. साहित्य संस्थान, 2021.
8. पाडेस्की, क्रिस्टीन ए. *संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा के मूल सिद्धांत*. गिल्फोर्ड प्रेस, 1990.
9. बेक, आरोन टी. *संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा(Cognitive Behavioral Therapy)*. गिल्फोर्ड प्रेस, 2011.
10. मेडिकेयर. *संज्ञानात्मक व्यवहार थेरेपी: एक समझ*. मानसिक स्वास्थ्य विभाग, 2025.
11. यादव, उषा. *नारी चेतना और अस्मिता: जैनेंद्र के साहित्य के संदर्भ में*. विश्वविद्यालय प्रकाशन, 2016.
12. विवेकानंद, स्वामी. *राजयोग और पतंजलि योगसूत्र भाष्य*. रामकृष्ण मठ, 2005.
13. वाजपेयी, नंददुलारे. *आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियां*. लोकभारती प्रकाशन, 1965.
14. वर्णवाल, सुरेश. *योग और मानसिक स्वास्थ्य*. न्यू भारतीय बुक पब्लिकेशन, 2002.
15. शर्मा, रामनाथ. *भारतीय मनोविज्ञान*. संस्कृत संस्थान, 2015.
16. सराफ, मीनाक्षी. *चित्त और चेतना: योगसूत्र और आधुनिक मनोविज्ञान*. योग शोध पत्रिका, 2023.
17. सिंह, उज्ज्वल कुमार. *अष्टांग योग और दैनिक जीवन में उसका लाभ*. भारती प्रकाशन, 2025.
18. सरस्वती, स्वामी सत्यानंद. *समाधि के चार सोपान*. योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, 1998.
19. हॉफमैन, स्टीफन जी. *संज्ञानात्मक व्यवहार चिकित्सा की प्रभावशीलता*. मनोविज्ञान जर्नल, 2012.

•